M.A. SEMESTER III CC-10 01

81

अर्धमागधी आगम साहित्य

इकाई (2) उत्तराध्ययन

Q: उत्तराध्ययन के आधार पर ब्राह्मण धर्म और श्रमण धर्म पर तुलनात्मक दृष्टि से विचार करें।

Ans - जैन आगमों में ब्राह्मण धर्म के ऊपर तुलनात्मक दृष्टि से विचार किया गया है ये विचार प्रसंग वश उपस्थित किए गए हैं। जैसे कहीं ऐसा प्रसंग है कि कोई गृहस्थ ब्राह्मण परिव्राजक का अनुयायी है। वह किसी जैन मुनी के शरण में उपस्थित होता है। उससे पूछा जाता है कि तुम्हारे धर्म का मूल क्या है? वह उत्तर देता है कि हमारे मूल शोच या शुद्धि है।
यह शुद्धि दो प्रकार की है। (I) अन्तः शुद्धि (II) बाह्य शुद्धि
(I) अन्तः शुद्धि - अन्तः शुद्धि तीर्थ स्थान से होती है।
(II) बाह्य शुद्धि - बाह्य शुद्धि मिट्टी और जल से की जाती है। इसके बाद जैनाचार्य अपने धर्म की व्याख्या करते हैं और कहते हैं कि इस धर्म का मूल विनय है। और फिर विनय के अन्तर्गत पाँचवा महाव्रत अनुव्रत और शीलों की व्याख्या की जाती है।
" तथा धम कहा के अन्तर्गत शुक परिव्राजक और स्थापत्य पुत्र नामक जैन मुनि के बीच सन्धिवाद हुआ है। यहाँ पर स्मरण रखना चाहिए कि पूर्व पक्ष को प्रतिपक्षी ने उपस्थित किया है। अतः उसके दोषों को उभार कर प्रदर्शित किया गया है

उत्तरा अध्ययन में भी कई स्थलों पर प्रसंगवश
ब्राह्मण धर्म को अपने सामने रख कर इस पर
विचार किया गया है किन्तु हरिएसिज्जं
नामक अध्ययन का तो विषय यही है ब्राह्मण व्यवस्था
में वर्णाश्रम व्यवस्था का बहुत महत्व है।
प्रत्येक वर्ण का समाज में स्थान नियत है
और वर्ण के अनुसार उसके कर्तव्य भी
नियत हैं। इस व्यवस्था के कायम होने
के कारण भगवान राम को भी शंबुक नामक
शूद्र का भी वध करना पड़ा था। क्योंकि
वह वर्ण व्यवस्था के विरुद्ध तपस्या कर
रहा था। गीता में कहा जाता है कि अपने
धर्म का पालन करते हुए निधन को प्राप्त
होना श्रेयस्कर है। लेकिन पर धर्म का पालन
कर अपनाना कभी श्रेयस्कर नहीं है। अर्थात क्षत्रिय
का धर्म युद्ध करना ही है। उसे गृहस्थावस्था में
नहीं लेना चाहिए। श्रमण परम्परा में वर्ण धर्म को
पालन की कोई ऐसी कड़ी व्यवस्था नहीं है।
इसी तरह से आश्रम व्यवस्था के प्रति भी श्रमण
धर्म उदासीन है ब्राह्मण धर्म में सामान्यतः ब्रह्मचर्य
और गृहस्थ अवस्थाओं के बाद ही व्यवस्था ब्राह्मण
धर्म ने दी गई है किन्तु श्रमण धर्म में कोई द्विज
भी समय पर घर छोड़ कर कोई भी मुनी
अनगार धर्म व्रत हरिएसिज्जं नामक अध्ययन
के विषय को संक्षेप में निम्न लिखित पंक्ति-
-यों में सार रूप रख दिया है।
इस अध्ययन
की कथा यह है कि हरिकेश नामक की स्वयं
चण्डाल है वह जैन धर्म में दीक्षित होकर
अनगार तपस्वी का जीवन व्यतीत करता

है। एक महीने के उपवास के बाद पारणा के निमित्त वह ब्राह्मणों के एक यज्ञ स्थल पर पहुँचता है। वहाँ पर पारणा के लिए अनेकों प्रकार के भोजन पकते हैं वह भोजन की याचना करता है किन्तु जाति मद से ब्राह्मण उसे फटकार देते हैं और कहते हैं कि चाण्डाल चाहे कितना भी ब्राह्मण तपस्वी क्यों न हो यज्ञ में अन्न ग्रहण का भागी नहीं हो सकता इसके भागी ~~एक~~ एक मात्र ब्राह्मण ही हैं मुनि कोई और ले सकता इसके भागी एक मात्र ब्राह्मण ही हैं। एक तक ब्राह्मणों से विवाद करते रहते हैं और अन्त में इस बात पर राजी कर लेते हैं कि उनका जाति वाद एक बाहरी आडम्बर ही है जीव अपने कर्तव्य से ही ऊँचा उठ सकता है या नीचा गिर सकता है जन्म से ही कोई बड़ा या छोटा नहीं हो सकता है अतः महत्व जाति का नहीं कर्तव्य का है। इस प्रकरण में ब्राह्मण धर्म में बहुमान्य यज्ञ याचना के ऊपर भी आक्षेप किया जाता है। ऐसा कहा जाता है कि यज्ञ जो कि स्वयं एक आडम्बर है बंध का कारण हो सकता है। मोक्ष का कारण कभी नहीं। मोक्ष तो तपस्या के द्वारा ही संभव है। तपस्या स्वयं यज्ञ से बढ़कर कभी नहीं। मोक्ष तो तपस्या के द्वारा होना संभव है तपस्या रूपी यज्ञ में कर्मों की आहुति देनी चाहिए। सिर्फ [illegible] यज्ञ है। तीर्थ स्नान भी व्यर्थ है ऐसे किसी पुण्य का संचय नहीं होता है। पुण्य का संचय तो सत्य अहिंसा अपरिग्रह आदि व्रतों का पालन करने से ही होता है। इस तरह हम पाते हैं कि उत्तराध्ययन के इस हरिकेशीय नामक अध्ययन में जाति के आधार पर ऊँचा [illegible] नीचा का भेद का खण्डन किया गया है। यज्ञ और तीर्थ स्नान के निन्दा की गयी है तपस्या एवं त्याग की सराहना की गयी है।